ऐतिहासिक एवं धार्मिक पर्यटक स्थलों का साक्षी झालावाड़

झालावाड़ स्थापना दिवस 8 अप्रैल पर विशेष

झालावाड़ जिला आज कोटा संभाग का महत्वपूर्व जिला है। यह जिला 23.45’ से 24. 52’ उत्तरी अक्षांश एवं 75. 27’ से 76. 56’ पूर्वी देशान्तर पर स्थित है। जिले का क्षेत्रफल 6219 वर्ग किमी. है। जिले की सीमाएं मध्य प्रदेश राज्य तथा कोटा व बारां जिलों से जुड़ी हैं। जिला हाड़ौती के पठारी भाग पर स्थित है। समुद्रतल से इसकी ऊँचाई 900 से 1800 फीट तक है। जिले में काली सिंघ, पार्वती, आहू, पिपलाज, क्यासरा, रेवा, चन्द्रभागा, परवन, छापी, अंधेरी, घार एवं उजाड प्रमुख नदियां है। सभी नदियों का उद्गंम मध्य प्रदेश के मालवा पठार से होता है। परवन नदी अमझार एवं घोड़ा पछाड़ नदियों के संगम से बनी है। जिला वनों की दृष्टि से समृद्ध है। यहाँ 22.15 प्रतिशत भाग पर वन पाये जाते हैं। वनों से इमारती लकड़ी, घास, गोंद, शहद, तेन्दू पत्ता आदि प्रमुख वन उत्पाद है। जंगलों में सागवान, महुआ, बहेड़ा, घौकड़ा, सादड़ा, आंवलां, सालर एवं आम के वृक्ष पाये जाते हैं। वन्य जीव की दृष्टि मुकंदरा राष्ट्रीय अभयारण्य का कुछ भाग झालावाड़ से लगता है। गागरोन में पाये जाने वाले राय तोते प्रसिद्ध है। प्रमुख जलाशयों पर सीजन में प्रवासी पक्षी आते हैं।
अर्थव्यवस्था

अर्थव्यवस्था की दृष्टि से जिले में संतरों का उत्पादन बड़े पैमाने पर होता है। भवानीमंडी संतरों एवं अफीम की खेती के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ कपास, ज्वार, सोयाबीन, मक्का, मूंगफली, गेहूँ, चना, धनिया, सरसों की खेती की जाती हैं। पशुपालन भी महत्वपूर्ण व्यवसाय है। यहाँ मावली नस्ल की गायें एवं जमनापरी नस्ल की बकरियां मिलती हैं। डग में मावली नस्ल के संरक्षण हेतु पशु प्रजनन केन्द्र स्थापित किया गया है। खनिज के रूप में इमारती पत्थर, कोटा स्टोन, तांबा, कच्चा लौहा, कैलसाइट, बॉक्साइट, डोलो माईट, लाइम स्टोन, सैंड स्टोन एवं बैंटोनाइल पाये जाते हैं। सबसे पुरानी राजस्थान टेक्सटाइल मिल भवानीमण्डी में है। जिले में हाथ करघा उद्योग है। रीको द्वारा औद्रयोगिक क्षेत्र की स्थापना की गई हैं। मूर्तियां, मिट्टी के खिलौने, आभूषण कला तथा बसेड़ों की कला (बेंत बांस का कार्य) प्रमुख हस्तशिल्प हैं।
कला – संस्कृति

कला एवं संस्कृति की दृष्टि से बिन्दोरी, घूमर, फंदी एवं चकरी मुख्य लोक नृत्य हैं। प्रमुख नृत्य बिंदौरी

गैर शैली का नृत्य है। यह नृत्य होली एवं विवाह के अवसरों पर किया जाता है। गेरू एवं खड़िया से जमीन एवं दीवारों पर मांडने बनाये जाते हैं। नाट्कों के प्रचलन होने से यहाँ भवानी नाटच शाला बनाई गई है। पीपा जी यहाँ के प्रमुख संत रहे। गागरोन में संत पीपा जी की समाधि है। जिले में सभी धर्मो के पर्व उत्साह पूर्वक मनाये जाते हैं। जिला मुख्यालय पर संस्कृति को संजोये राजकीय संग्रहालय स्थापित है। जिले में चन्द्र भागा नदी एवं गोमती सागर के किनारे भव्य पशु मेलों का आयोजन किया जाता हैं। चन्द्रभागा पशु मेला कार्तिक शुक्ल ग्यारस से मार्ग शीर्ष कृष्ण पंचमी तक भरता है। गोमती सागर पशु मेला झालरा पाटन में वैशाख शुक्ल तेरस से ज्येष्ठ कृष्णा पंचम तक भरता है। दोनों मेले मावली नस्ल के पशुओं के लिए प्रसिद्ध हैं। जिले के अकलेरा-भवानीमंडी में बसंत पंचमी मेला, क्यासरा में कालेश्वर महादेव मेला एवं गागरोन में मिट्ठे शाह का उर्स जिले के सांस्कृतिक आयोजन हैं। काथूनी, दलहनपुर, कोलवी पुरासंपदा की दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थल है। गागरोन का किला, मिट्ठे शाह की दरगह, झालरापाटन में सूर्य मंदिर, चांद खेडी में भगवान आदिनाथ का जैन मंदिर, चन्द्रावती नदी, के किनारे शीतलेश्वर महादेव मंदिर, नागेश्वर में पार्श्वनाथ जैन मंदिर एवं डग में कोलवी की बौद्ध गुफाएं प्रमुख दर्शनीय स्थल हैं ।

राजमहल

झालावाड़ नगर की नींव 1791 ई. में कोटा राज्य के फौजदार झाला जालिमसिंह ने रखी। राणा मदन सिंह ने 1838 में झालवाड़ को अपनी राजधानी बनाया और नये राज्य की स्थापना की। उसके द्वारा बनाया गया दुर्गनुमा महल दर्शनीय है। महलों का निर्माण कार्य राज राणा पृथ्वी सिंह के समय 1854 ई. में पूर्ण हुआ। आयताकार महल में प्रवेश हेतु तीन दरवाजे बनाये गये हैं। महल में बने रंगशालाएं, झरोखे, जनानी ड्यौढ़ी दरीखाना, सभागार एवं शीश महल दर्शनीय हैं। पांच मंजिला महल बाहर से आकर्षक एवं फतहपुर सीकरी के पंच महल जैसा नजर आता है। रंगशाला एवं शीश महल के सुन्दर जाली वाले झरोखे, अष्टदल कमल की, आकृति वाले पुष्प, आयाताकार कक्ष एवं बड़े-बड़े हॉल बने हैं। जनानी ड्योढ़ी महल कक्ष में एक गुप्त सुरंग मार्ग भी बनाया गया है। महल के कोनों पर अष्टकोणीय छतरियां बनाई गई हैं। महलों में बने भित्ति-चित्र कोटा-बूंदी शैली के चित्रों से मिलते-जुलते हैं। चित्रों में शासकों के चित्र, शाहजी जुलूस, दरबार, पर्वो,उत्सवों, नृत्य, रासलीला, चौबीस अवतार, शाही इन्द्र विमान की सवारी, वन्य-जीव एवं प्रकृति के साथ पक्षियों के चित्रों का चित्रांकन दर्शनीय है।झालावाड़ में गढ़ पैलेस स्थित गणेश मंदिर, मंशा पूर्ण बालाजी मंदिर, राजा कुण्ड एवं बावड़ी तोपखाना, तखत सिंह की हवेली, महाराजा भीमसिंह की हवेली, बोहरा दुर्गा शेर जी हवेली, उदय कुंवर बाई बांवड़ी, रानी चन्दबली जी की बावड़ी, रामद्वारा, राज राजेश्वर मंदिर, दरबार कोठी (पृथ्वी विलास), गोवर्धन नाथ मंदिर, ठाकुर उमराव सिह जी की हवेली आदि अनेक और मंदिर, हवेलियां एवं बावड़ियां दर्शनीय हैं। झालावाड़ में कृत्रिम झील कृष्ण सागर भी दर्शनीय है।

0

20 वीं शती के प्रथम चरण में जब राजपूताने के सभी राजाओं में संग्रहालय बनवाने की होड़ लगी हुई थी, झालावाड़ नरेश भवानीसिंह (1829-1929) ने भी अपने राज्य में एक संग्रहालय की स्थापना का विचार किया। रियायत से इकट्ठे किए गए वास्तुखण्डों और देवी-देवताओं की मूर्तियों को एक भवन में प्रदर्शित कर इनकी देखरेख के लिए पं. गोपाल लाल व्यास को संग्रहाध्यक्ष नियुक्त किया। इसका

विधिवत उद्घाटन 1 जून 1915 ई. को हुआ। महाराजा ने अपनी रियासत के प्रमुख केन्द्रों, चन्द्रभागा नदी का तट, रंगपटन काकूनी, डग एवं रामगढ़ आदि स्थानों का सर्वेक्षण करवाया, जिसमें पुरावस्तुओं का विशाल भण्डार एकत्र हो गया, जिनमें पुरातात्विक महत्व के वास्तुखण्ड, देवी-देवताओं की मूर्तियों और शिलालेख थे, इन्ही में चन्द्रभागा नदी के तट पर स्थित शिवालय का तिथियुक्त लेख भी था। प्रदर्शित मूर्तियों में संयुक्त मूर्तियों जैसे अर्द्धनारीश्वर -शिव एवं शक्ति का संयुक्त रूप, मार्तण्ड भैरव-शिव व सूर्य, हरिहर-शिव व विष्णु प्रमुख है। यों तो मध्यकालीन राजस्थान में इन स्वरूपों की बहुलता है पर हाड़ौती में सबसे अधिक। चूंकि यह शैव क्षेत्र था, इसलिए मठों के वास्तु खण्ड और शैवाचार्यो की अनेक मूर्तियां मिलती हैं। इन सबके विशाल संग्रह को यहां प्रदर्शित किया गया। तत्कालीन परम्परा के अनुसार कतिपय हस्त लिखित, चित्रित एवं अचित्रित ग्रन्थ, हाथ की बनी तस्वीरें और स्थानीय हस्तकोशल के उदाहरण भी प्रदर्शित किए गए। संग्रहालय में सिक्कों का बहुत अच्छा संग्रह है, जिसमें प्राचीन, मध्यकालीन और आधुनिक सिक्के सम्मिलित हैं। चित्रों को देखकर लगता है कि झालावाड़ में कोटा से अलग एक शैली विकसित हुई, इनकी रेखाओं में गति है, रंग तेज है और श्रृंगारिकता अधिक है।भवानी नाटचशाला

भवानी नाटचशाला

झालावाड़ महल के समीप स्थित भवानी नाटचशाला को देखकर हर कोई आश्चर्य करने लगता है। ओपेरा शैली में बनी यह रचना जटिल तकनीक एवं रंगमचीय व्यवस्था का अनूठा उदाहरण है। नाटचशाला में मंच को ऊपर नीचे ले जाने एवं हाथी घोड़ों एवं रथों को मंच पर उतारने की अद्भुत व्यवस्था है। इन्हें ध्वनि एवं प्रकाश व्यवस्था से हवा में तैरता हुआ दिखाया जा सकता है। करीब 50 फुटे ऊँचे मंच के तलघर में 8 कक्ष बने हैं जिन्हें ग्रीन रूम के लिए उपयोग में लाया जाता है। प्रेक्षागृह तिमंजिला है जहां बैठने के लिए 36 कक्ष बने हैं। यहां प्रथम बार 16 जुलाई 1921 को अभिज्ञान शाकुन्तलम नाटक का प्रदर्शन किया गया। यहां स्वतंत्रता संग्राम के दौरान स्वतंत्रता की भावनाओं संबंधित नाटक खेले जाते थे। इस विचित्र नाटचशाला का निर्माण राणा भवानी सिंह ने 1921 ई. में करवाया था।

गागरोन दुर्ग

काली सिंध एवं आड नदियों के संगम पर स्थित गागरोन का दुर्ग भारत में जल दुर्ग का बेहतरीन उदाहरण है। यह दुर्ग झालावाड से मात्र तीन किलोमीटर दूरी पर स्थित है। सड़क मार्ग से जाने पर यह 14 किलोमीटर दूरी पर पड़ता है। इसका निर्माण समय-समय पर 8 वी से 18 वीं शताब्दी के मध्य किया गया। इस दुग को इसके महत्व के कारण इसे हाल ही में यूनेस्को द्वारा विश्व विरासत सूची में शामिल किया गया है। दुर्ग के चारों तरफ विशाल खाई, नदियां एवं सुदृढ़ प्राचीर इसे सुरक्षा प्रदान करते हैं। दुर्ग तक पहुँचने के लिए नदी में एक पुल बनाया गया है। इस दुर्ग पर शुंग, मालवों, गुप्तों, राष्ट्रकूटों, खींचियों का शासन रहा। अल्लाउद्दीन खिलजी इसे कई वर्षो तक घेरे रखने के बाद भी जीत नहीं सका। अकबर ने यह दुर्ग बीकानरे के पृथ्वीराज राठौड़ को दे दिया। भक्त शिरोमणी रामानंद के शिष्य संता पीपा भी इस दुर्ग के शासक रहें, जिन्होने अपना राजपाठ त्याग कर दुर्ग अपने भाई अचलदास खींची को सौंप दिया। वर्ष 1436 ई. में राजा की रानी उमादेवी की सुंदरता के कारण उसे पाने के लिए सुल्तान महमूद खिलजी (मालवा) ने काफी समय दुर्ग को घेरे रखा। शत्रु को हराने का उपाय न सूझा तो स्त्रियों ने जौहर कर लिया एवं पुरूष रण में मारे गये। अचलदास खिचीं की वचनिका नामक काव्य रचना से पता चलता है कि उमा रानी ने चालीस हजार महिलाओं के साथ जौहर किया। अगले वर्ष अचलदास के पुत्र

पाल्हणसी ने अपने मामा कुंभा की सहायता से दुर्ग पर आक्रमण कर अधिकार कर लिया। राठौड़ों के पतन के बाद दुर्ग बूंदी के शासकों हाड़ाओं के अधीन आ गया एवं यहीं से कोटा रियासत के अधीन हो गया। दुर्ग में सूरजपोल, भैरवपोल एवं गणेशपोल के साथ दुर्ग की सुदृढ़ बुर्जों में राम बुर्जों एवं ध्वज बुर्जों बनी हैं। विशाल जौहर कुंड, राजा अचलदास एवं रानियों के महल, बारूदघर, शीतलामाता एवं मधुसूदन के मंदिर हैं। यहाँ कोटा राज्य के सिक्के ढालने की टकसाल भी थी। वर्ष 1838 ई. में झालावाड़ राज्य की स्थापना के बाद से यह दुर्ग स्वतंत्रता प्राप्ति तक झालाओं के अधीन रहा।

संतपीपा की समाधी

गागरोन दुर्ग के समीप संत पीपा की समाधी बनी है। संत पीपा संत कबीर, रैदास के समकालीन थे। पीपा जी तपस्या करते हुए वहीं समाधिष्ठ हो गये थे। उनकी समाधि पर जयंती पर प्रतिवर्ष चैत्र शुक्ल दशमी को पांच दिवसीय महोत्सव धूम-धाम से मनाया जाता है। हजारों श्रद्धालु पीपा जी की समाधि पर मत्था टेकते हैं। समस्त हिन्दु एवं सिक्ख समाज के लोग पीपाजी में गहरी अस्था रखते हैं। पंजाब सहित देश के कई हिस्सों से श्रद्धालु यहाँ आते हैं। दर्जी समाज के लोग उन्हें अपना कुल गुरू मानते है। पीपा जी ने सदाचार एवं शाकाहार पर बल दिया उनके नीति परक दोहें आज भी चांव से सुने जाते हैं।वर्षों से उपेक्षित इस स्थान का धार्मिक एवं अध्यात्मिक महत्व को देखते हुऐ वर्ष 2003 में मुख्यमंत्री वसुन्धरा राजे ने यहाँ भव्य मंदिर बनवाया। अखिल भारतीय पीपा क्षत्रिय महासभा ने भी भरपूर सहयोग किया। अब यहाँ सवा तीन एकड़ जमीन पर पीपा जी पैनोरमा विकसित किया जा रहा है।गागरोन दुर्ग में स्थित सूफी संत मीठेशाह की दरगाह भी मुसलमानों की जियारत का प्रसिद्ध स्थल है। दरगाह का प्रवेश द्वार औरंगजेब द्वारा बनवाया बुलन्द दरवाजा देखते ही बनता है।झालरापाटन

जहाँ आज झालरापाटन नगर है वहाँ कभी समीप में चन्द्रावती नामक भव्य नगर था। चन्द्रावती से करीब 3 किलोमीटर पर कोटा राज्य के सेनापति झाला जालिम सिंह ने 1796 ई. में झालरापाटन नगर की स्थापना की। कालान्तर में यह एक बड़ा व्यापारिक केन्द्र बन गया। यहाँ अनेक हिन्दु, जैन मंदिर तथा चन्द्रावती (चन्द्रभागा) के कलात्मक मंदिरों को देखने सैलानी यहाँ आते हैं। झालरापाटन के समीप गोमती सागर की ओर एक रमणिक उद्यान एवं सड़क के दूसरी तरफ हर्बल उद्यान दर्शनीय हैं। गौमती सागर के किनारे नगर का प्रमुख द्वारिकाधीश मंदिर है। इसकी नींव रख कर झाला जालिम सिंह ने नगर का निर्माण प्रारंभ कराया था। मंदिर का कार्य 1796 ई. में हुआ तथा विग्रह की स्थापना 1805 ई. में नौ वर्ष बाद की गई। देवस्थान के अधीन मंदिर का प्राकृतिक दृश्य लुभावना है।चन्द्रभागा मंदिर

झालरापाटन के समीप बहने वाली चन्द्रभागा नदी के किनारे बना प्राचीन देवालयों का समूह अपने पुरातत्व एवं धार्मिक महत्व का होने से विशेष स्थान रखता है। यहां के मंदिरों की कारीगरी देखते ही बनती है। गुप्तकालीन मंदिर प्रमुख है। गर्भगृह की पट्टिका पर लकुलीश की सुन्दर लघुमूर्ति स्थापित है। मंदिर द्वार के नीचे दोनों ओर गंगा-यमुना की प्रतिमाएं हैं। यह मंदिर समूचे उत्तर भारत का कला की दृष्टि से सबसे अधिक अनोखा तथा राजस्थान का एक मात्र तिथियुक्त मंदिर है। यहां से प्राप्त अर्द्धनारिश्वर की अद्वितीय मूर्ति चित्ताकर्षक है तथा यहां से प्राप्त चामुण्डा, सूर्य नारायण, वराह, गणेश, काली, विष्णु आदि की मूर्तियां गौरवपूर्ण निधी हैं। यहां के काली मंदिर में सातवीं-आठवीं सदी की नटराज शिव की विशाल मूर्ति देखते ही बनती है। नटराज की इस प्रतीमा में सोलह भुजाएं हैं और उनमें विविध आयुध धारण किये हुए हैं।नवदुर्गा एवं सप्तमातिका के मंदिर भी यहां बने हैं। मुख्य मंदिर के पीछे बने दो भग्न शिव मंदिरों के प्रवेश द्वार की कारीगरी अद्भुत है। प्रतिवर्ष कार्तिक पूर्णिमा के अवसर पर हजारों श्रद्धालु चन्द्रभागा में स्नान कर पुण्य कमाते हैं और इस मौके पर यहां भव्य मेले का

आयोजन भी किया जाता है।

सूर्य मंदिर

झालावाड़ जिले का महत्वपूर्ण ऐतिहासिक एवं कलात्मक सूर्य मंदिर झालरापाटन कस्बे के मध्य स्थित है। करीब 96 फीट ऊंचे शिखरबंद इस मंदिर के पृष्ठ भाग में सूर्य प्रतिमा बनी है, जबकि गर्भगृह में भगवान विष्णु की प्रतिमा स्थापित है। मंदिर के कारीगरीपूर्ण स्तम्भ, तोरणद्वार, जाली-झरोखे, मंदिर के ऊपर बनी छतरियां एवं इनमें स्थापित मूर्तियां, मंदिर की परिधि गृह में बाहर की ओर बनाई गई विभिन्न मुद्राओं में अप्सराओं व देवी-देवताओं की मूर्तियां देखते ही बनती हैं। मंदिर की स्थापत्य व मूर्तिकला खजुराहो मंदिरों के सदृश्य है। मंदिर में शैव-शाक्त और वैष्णव मत की देव मूर्तियों का सुन्दर समन्वय देखने को मिलता है। मंदिर के गर्भगृह के बाहरी स्थान की शुकनासा के ठीक नीचे शिव की नृत्य मूर्ति देखते ही बनती है। मंदिर के पार्श्व भाग में सूर्य देव की एक सुन्दर प्रतिमा स्थित है। मंदिर के उत्तरी भाग में वीणा एवं वंशीधारी गन्धर्व की एवं दक्षिण भाग में नरसिंह व हिरण्याकश्यप का मल्लयुद्ध मूर्तिकला का सुन्दर उदाहरण है। गर्भगृह के बाहर चारों ओर सात-सात सुरलियों के होने तथा उत्तरांग पट्टिका पर सप्तमातृका की मूर्तियों के अंकन से इसे सात सहेलियां का मंदिर भी कहा जाता है। मंदिर के अन्तराल में एक ओर शिव-पार्वती एवं दूसरी ओर विष्णु-लक्ष्मी की युगल प्रतिमाएं स्थापित हैं। मंदिर के मण्डोवर में देवों के साथ सुर-सुन्दरियों, अप्सराओं की नृत्य मूर्तियां उत्कीर्ण है। मंदिर के मध्य उत्तर-दक्षिण में नागा साधुओं की सुन्दर मूर्तियां मुंह बोलती प्रतीत होती है। साधुओं की इन मुद्राओं में ध्यानावस्था, हाथ में मणिमाला, गले में रूद्राक्ष, दाढ़ी-मूछें एवं जुटा-जुट हैं।

शांतिनाथ जैन मंदिर

झालरापाटन में सूर्य मंदिर के समीप ही 10 वीं शताब्दी का पूर्वाभिमुख शांतिनाथ जैन मंदिर जैन धर्मावलंबियों का प्रमुख आस्था केन्द्र है। गर्भगृह में काले संगमरमर की शांतिनाथ जी दिगंबर प्रतिमा के दर्शन होते हैं। मंदिर के प्रवेश द्वार पर बने विशालकाय हाथी दर्शनीय है। परिसर में जैन धर्म से संबंधित विभिन्न कथानकों के बड़े-बड़े आकर्षक चित्र बनाए गए हैं। मंदिर में अष्टबाहु चक्रेश्वरी देवी की चित्ताकर्षक मूर्ति का शिल्प देखते ही बनता है। झालरापाटन में सूर्य मंदिर के समीप ही 10 वीं शताब्दी का पूर्वाभिमुख शांतिनाथ जैन मंदिर जैन धर्मावलंबियों का प्रमुख आस्था केन्द्र है।कोलवी की बौद्ध गुफाएं

कोलवी की बौद्ध गुफाएं

झालावाड़ से 90 किलोमीटर दूर कोलवी नामक गांव में चट्टानों को काटकर बनाई गई बौद्ध गुफाएं राजस्थान में बौद्धकालीन संस्कृति के अवशेष के रूप में अपना विशेष महत्व रखती हैं। क्यासरा नदी के तट पर करीब 200 फीट ऊंची अश्वनाल आकृति की पहाड़ी पर विशाल चट्टानों की काटकर बनाई गई इन गुफाओं की खोज 1835 में डॉ. इम्पे द्वारा की गई। गुफाओं पर हिन्दु शैली के मंदिरों का तथा स्तूप शिखर पर दक्षिण भारतीय कला का प्रभाव नजर आता है। यहां बनी दो मंजिली गुफाएं विशेष रूप से दर्शनीय हैं। कुछ गुफाओं में भगवान बुद्ध की प्रतिमाएं एवं दीवारों पर रेखांकन नजर आता है। कोलवी से 12 किलोमीटर बिनायका में भी पहाड़ी पर चट्टानों को काटकर 16 गुफाएं बनाई गई हैं। पगारिया गांव के समीप हथियागोड़ की पहाड़ी पर भी 5 गुफाएं बनी हैं। गुनाई ग्राम के समीप बौद्ध श्रमणों की 4 गुफाएं हैं। कोलवी के आसपास गांवों में बनी बौद्ध गुफाओं से ज्ञात होता है कि राजस्थान का यह स्थल कभी बौद्ध धर्म का एक प्रभावी केन्द्र रहा होगा।

नागेश्वर पार्श्वनाथ

राजस्थान के ही नहीं, देश के प्रसिद्ध जैन मंदिरों में झालावाड़ से 190 किलोमीटर पर राजस्थान और मध्य प्रदेश की सीमा पर चौमहला से 9 किलोमीटर दूर उन्हेल गांव में 23वें तीर्थंकर पार्श्वनाथ को समर्पित नागेश्वर पार्श्वनाथ जैन मंदिर अपना विशिष्ट महत्व रखता है। यहां नागेश्वर पार्श्वनाथ की 2829 वर्ष पुरानी सप्तफणधारिणी कायोत्सर्ग मुद्रा में हरे पाषाण की 13.5 फुट ऊंची प्रतिमा के दर्शन होते हैं। यह प्रतिमा ग्रेनाईट सेण्ड स्टोन से बनाई गई है। कमल के पत्ते, धर्मचक्र आदि की रचनाएं मूर्ति का सौन्दर्य बढ़ाती हैं। भगवान शांतिनाथ स्वामी एवं श्री महावीर स्वामी की करीब 4-4 फीट की मूर्तियां मुख्य प्रतिमा के दोनों ओर स्थापित हैं। सफेद संगमरमर से बना कारीगरीपूर्ण खूबसूरत मंदिर शिल्प कला का चमत्कार कहा जा सकता है। मुख्य मंदिर के परिसर में 24 जिनालय बनाए गए हैं, जिनमें 24 तीर्थंकरों की प्रतिमाएं स्थापित हैं। मंदिर में पदमावती एवं श्री मणिभद्रावीर की प्रतिमाएं भी स्थापित हैं। कहा जाता है कि उन्हेल के राजा और रानी पदमावती ने एक विशाल मंदिर बनवाया और वहां प्रतिमा स्थापित की। मुगलकाल में इस मंदिर को कई बार क्षति पहुंचाई गई। विक्रम संवत 1264 में नागेन्द्र एवं अभयदेव सूरी ने इस मंदिर का जीर्णोद्धार कराया। उस समय वहां करीब 500 जैन परिवार रहते थे, जिन्होंने गांव छोड़ दिया और मंदिर फिर से बर्बाद हो गया। उपाध्याय धर्मसागर जी महाराज एवं अभय सागर जी महाराज ने इस स्थान का भ्रमण किया तथा णमोकार मंत्र के साथ तीर्थ के इतिहास का पता लगाया और योजना बनाई कि इस तीर्थ का नवीनीकरण किया जाए। उन्होंने अपने भक्त उन्हेल नागेश्वर के निवासी सेठ दीपचंद जैन को वर्तमान मंदिर के पुनर्निमाण की जिम्मेदारी सौंपते हुए कहा कि यहां ऐसा मंदिर बने, जो न केवल हमारे देश में बल्कि विदेशों में भी अद्‌वितीय हो। सेठ दीपचंद ने संतों की इच्छा के मुताबिक वर्तमान भव्य एवं कलात्मक मंदिर का निर्माण किया। इस जैन मंदिर की ख्याति दिनों-दिन बढ़ती रही और आज यहां दर्शनार्थियों की विशेष रेलगाड़ी पहुंचने लगी है। यह मंदिर देश के ही नहीं, विदेश के जैन मतावलंबियों का प्रमुख आस्था केन्द्र बन गया है।

चांदखेड़ी जैन मंदिर

श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र चांदखेड़ी का जैन मंदिर अपनी स्थापत्य कला और कारीगरी की दृष्टि से विशेष पहचान रखता है। यह मंदिर भगवान आदिनाथ को समर्पित है। भगवान आदिनाथ की आकर्षक एवं शांतभाव मुद्रा में स्थापित प्रतिमा सभी को आकर्षित करती है। यह मंदिर 11वीं शताब्दी में एक छोटी नदी के किनारे बनाया गया। मंदिर लाल पत्थर से निर्मित 5.25 फीट ऊंचे प्लेटफार्म पर बना है, जिसके नीचे 52 फीट का तलघर बनाया गया है। मंदिर के स्तम्भ एवं तोरणद्वार स्थापत्य कला व कारीगरी के अद्‌भुत नमूने हैं। बताया जाता है कि मंदिर का निर्माण विक्रम संवत् 1730 से विक्रम संवत् 1746 के मध्य कोटा राज्य के मंत्री किशनदास मारिया ने कराया था। सर्वप्रथम मंदिर के तलघर का निर्माण कार्य प्रारंभ हुआ एवं इसके बाद मंदिर के अन्य कार्य कराए गए। विक्रम संवत् 1736 को भगवान आदिनाथ की प्रतिमा धार्मिक समारोह के साथ स्थापित की गई। इसके पश्चात मंदिर का शेष निर्माण कार्य विक्रम संवत् 1746 में पूर्ण किया गया। इसी वर्ष किशनदास जी ने भट्‌टारक जगत कीर्ति जी के सानिध्य में पंचकल्याणक महोत्सव का आयोजन किया। यहां स्थापित भगवान ऋषभदेव की 5.3 इंच ऊंची प्रतिमा शेरगढ़ के निकट बारापति क्षेत्र से प्राप्त हुई थी। मंदिर में भगवान सुपार्श्वनाथ, भगवान संभवनाथ, भगवान पार्श्वनाथ, भगवान बाहुबली, यक्षी, अंबिका एवं अन्य तीर्थंकरों की मूर्तियां स्थापित हैं। एक स्तम्भ पर तीर्थंकरों की 52 प्रतिमाएं एक तरफ तथा कुल 208 प्रतिमाएं उत्कीर्ण हैं, जो देखते ही बनता है। इसे 52 जैन प्रतिमाएं होने से 52 जिनालय भी कहा जाता है। यहां गंधकुटी, 5 वेदियां तथा कई

छोटी-छोटी वेदियां बनी हैं तथा पूरे मंदिर परिसर में 900 से अधिक जिनबिम्ब स्थापित हैं। मंदिर के पीछे के हिस्से में सुंदर समोशरण मंदिर बनाया गया है। मूल मंदिर के सामने मान स्तम्भ स्थापित है। यहां प्रतिवर्ष चैत्र माह की कृष्ण पक्ष की पंचमी एवं नवमी को वृहत उत्सव का आयोजन भी किया जाता है। दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र चांदखेड़ी झालावाड़ जिले में जिला मुख्यालय से 35 किलोमीटर दूर खानपुर कस्बे के समीप स्थित है।

कोटा से सांगोद होते हुए 90 किलोमीटर एवं झालावाड़ होते हुए 120 किलोमीटर दूरी पर है। मंदिर बारां से 48 किलोमीटर, भवानीमण्डी से झालावाड़ होते हुए 70 किलोमीटर तथा रामगंजमण्डी से 60 किलोमीटर एवं झालरापाटन से 40 किलोमीटर दूरी पर है। समीप के रेलवे स्टेशन झालावाड़ रोड, चौमहला, पचपहाड़ एवं भवानीमण्डी हैं, जो दिल्ली-मुम्बई बड़ी रेलवे लाईन पर आते हैं।.

———-